हिंदी की स्त्री आत्मकथाएँ : अस्मिता विमर्श

HINDI KI STREE AATMAKATHAYEN: ASMITA VIMARSH

Synopsis

(शोध सार)

शोध निर्देशक

डॉ. ऋषिभूषण चौबे

शोधार्थी

मुनमुन अग्रवाल

हिंदी विभाग

प्रेसीडेंसी विश्वविद्यालय कोलकाता ,

हिंदी की स्त्री आत्मकथाएँ: अस्मिता विमर्श

अस्मिता-विमर्श क्यों? अस्मिता विमर्श आज के सामाजिक एवं राजनीतिक परिदृश्य का सबसे प्रखर और मुखर स्वर है। पिछले कुछ दशकों में विचारधारा और चिन्तन की दुनिया में आए वैचारिक और अवधारणात्मक बदलावों ने 'अस्मिता' के प्रश्न को केन्द्र में लाकर खड़ा कर दिया है। विचारधारा और चिन्तन के दुनिया में आए इन बदलावों ने कई प्रकार की अस्मिताओं को जन्म दिया, जिनमें -राष्ट्रीय अस्मिता, सांस्कृतिक अस्मिता, स्त्री अस्मिता, दलित अस्मिता, आदिवासी अस्मिता, प्रवासी अस्मिता, किन्नर अस्मिता और अल्पसंख्यक अस्मिता इत्यादि प्रमुख हैं। अस्मिता कासंबंध व्यक्ति या समूह के पहचान से जुड़ा होता है। समाज में कई वर्ग सदियों से पीड़ित व शोषित रहे हैं, उन्हें मानवीय दृष्टि से बहुत कम देखा-समझा गया है, जिसके कारण उनके मन में असंतोष की भावना पनपने लगी और उनमें अपने वज़ूद का अहसास कराने की भावना तीब्र से तीब्रतर होने लगी। अस्मिता विमर्श ही वह विचारधारा है जिसके तहत इन वर्गों ने अपनी पहचान की बात उठाई और यह भी मांग की कि उन्हें भी समाज में सम्मानजनक स्थान मिलना चाहिए।

अस्मिता की धारणा ही यहीं से शुरु होती है कि मैं कौन हूँ, समाज में मेरी हैसियत क्या है,मेरा वजूद, मेरा अस्तित्व क्या है? वास्तव में आज़ादी के आंदोलन के दौरान यह कहा गया कि वर्गों के पहचान की हमारी जो अलग-अलग लड़ाई है वह राष्ट्र की मुक्ति के लिए है, पहले राष्ट्र मुक्त होगा फिर उसके सभी अंग मुक्त होगें पर राष्ट्र के मुक्त होने के बाद भी जाति प्रथा, वर्गीय समस्या खत्म नहीं हुई और यह प्रश्न बाद में स्त्री अस्मिता, दलित अस्मिता और आदिवासी अस्मिता के रुप में सामने आये।

यह भी ध्यान रखने की बात है कि अस्मिता पर एक आंदोलन के रुप में आधुनिक काल में विचार किया गया पर साहित्य की परम्परा के आधार पर विचार कर देखें तो पता चलता है कि अस्मिता के प्रति जागरुकता पहले भी हमारे साहित्य परम्परा में रही है क्योंकि कोई भी विचारधारा शून्य में पैदा नहीं होती

बल्कि उसके लिए जमीन पहले से तैयार होती है। कहने का अर्थ है कि हमारे यहां भी अस्मिता की एक देशज परम्परा रही है जिसका विश्लेषण विस्तार से शोध में किया गया है। वैदिक साहित्य, थेरी गाथाओं और भक्तिकाल में भी अस्मिता के प्रश्न शामिल हैं।एक तथ्य यह भी है कि वर्तमान संदर्भ में अस्मिता के प्रश्न काफी महत्वपूर्ण हैं इसलिए इस पर विचार करना जरुरी है।

अस्मिता विमर्श और स्त्री विमर्श के बीच क्या संबंध है यह भी जानना जरुरी है। साहित्य में हम जिसे स्त्री विमर्श के नाम से जानते हैं वह वास्तव में अस्मिता विमर्श ही है क्योंकि इसके अंतर्गत स्त्री अस्मिता से संबंधित मुद्दों पर बात की जाती है। स्त्री विमर्श स्त्री को पहचान दिलाने का आंदोलन है। इसमें स्त्री के स्व की बात की जाती है। मृणाल पांडे लिखती हैं-"अपने अस्तित्व की यह तलाश, हम सबके लिए सबसे पहले समाज से अपने रिश्ते की तलाश है। क्योंकि समाज से हमारे रिश्ते का जो संदर्भ बनता है, उसी का छोर थामकर हम अपने स्व की तलाश में भीतर की ओर मुड़ते हैं। कहना न होगा कि समाज से उसका निजी रिश्ता बहुत बड़े स्तर पर हर मानव की स्व की तलाश का स्वरुप तय करता है।'' **सामान्य शब्दों में कहें तो स्त्री के अस्तित्व को रसोई व बिस्तर के गणित से परे स्थापित करने की मुहिम ही स्त्री अस्मिता है।** स्त्री अस्मिता का मतलब है - स्त्री-पुरुष के बीच घटने वाले संबंधों को बिना नकारे, उसके पारस्परिक संबंध से मुक्ति। पिछले कुछ दशकों में उभरे सामाजिक अस्मिता के आन्दोलनों ने स्त्री की छवि, उसकी सामाजिक स्थिति और स्त्री के बारे में प्रचलित रूढ़िगत और मिथकीयअवधारणाओं को तोड़ा है।अस्मिता विमर्श के तरह ही स्त्री विमर्श का सरोकार स्त्री को मानवीय रुप में देखने की मांग है और साहित्य व समाज में स्त्री मुक्ति के प्रयास भी। यह विमर्श स्त्री के वंचित, उपेक्षित होने का विरोध करता है तथा स्त्री की स्थिति पर पुनर्विचार हेतु प्रेरित करता है।स्त्री विमर्श स्त्री के अधिकारों का विमर्श है। वह किसी को नीचा दिखाने का नहीं बल्कि समानता के स्तर तक पहुँचने का विमर्श है। **स्त्री विमर्श का मूल स्वर समाज में स्त्री के प्रति प्रचलित दृष्टिकोण को बदलना है। अस्मिता विमर्श का आधार भी समाज में**

समानता की भावना विकसित करना है। इस रुप में अस्मिता विमर्श तथा स्त्री विमर्श में काफी समानता है और उसका अध्ययन करना भी जरूरी है।

साहित्य की अन्य विधाओं से आत्मकथा में क्या अंतर है इसे भी जानना जरूरी है। प्रारंभ में जब आत्मकथा का स्वरूप स्पष्ट नहीं था तो लोग इसके स्वरूप को लेकर काफी उलझन में थे और इसे डायरी, संस्मरण तथा पत्र से जोड़कर देखते थे पर बाद में इसका स्वरूप स्पष्ट किया गया। धीरेन्द्र वर्मा ने हिंदी साहित्य कोश में इसे स्पष्ट करते हुए लिखा हैं-"डायरी, पत्र, संस्मरण सभी आत्मकथा के स्फुट रुप है, क्योंकि जाने अनजाने आत्मांकन करना ही इन रचना प्रकारों का उद्देश्य होता है। जीवन चरित्र आत्मकथा से इस अर्थ में भिन्न होता है किसी अन्य व्यक्ति की जीवनी चरित्र है, और किसी व्यक्ति द्वारा लिखी गई स्वयं अपनी जीवनी आत्मकथा।"पंकज चतुर्वेदी ने भी अपनी पुस्तक में लिखा है कि साहित्य में आत्मकथा ही ऐसी विधा है जिसे हर हाल में जीवन वास्तव के अधीन रहना पड़ता है। कहने का अर्थ है कि आत्मकथा जीवन का यथार्थ है और वह इस रुप में जीवन के काफी करीब भी है। वास्तव में आत्मकथा लिखना भी काफी कठिन कार्य है क्योंकि इसमें अपने अंतरंग का उद्घाटन किया जाता है और यह लेखक व पाठक के बीच सीधी बातचीत है।

यह भी एक तथ्य है कि अन्य विधाओं में उस विधा की कुछ विधागत सीमाएं होती हैं यद्यपि उसमें सत्य व्यक्त होता है परकिन्हीं कारणों से उसे कल्पना की चादर में लपेटकर व्यक्त किया जाता है जबकि आत्मकथा में आत्मकथाकार पूरी स्थिति को यथार्थ रुप में व्यक्त करता चलता है। इस विधा में कल्पना की कोई गुंजाइश नहीं होती बल्कि यथार्थ ही इसका मुख्य आधार होता है। तात्पर्य यह है कि आत्मकथा अपने को अभिव्यक्त करने का वह माध्यम है जिसके जरिये व्यक्ति समाज की जटिलताओं और निजी संबंधों की गुथियों को खोलता है। रमणिका गुप्ता लिखती हैं-"आत्मकथाएँ दूसरी विधाओं से भिन्न होती हैं, चूँकि यह सत्य अनुभवों पर आधारित होती है। इसमें परिस्थितियां बदली नहीं जाती बल्कि

परिस्थितियों का दस्तावेजीकरण होता है। आत्मकथा में जीवन के सत्य को दर्ज़ किया जाता है। पाठक या समाज उससे खुद निष्कर्ष निकालता है।"

आत्मकथा विधा की चुनौतियों को उकेरती हुई प्रभा खेतान लिखती हैं- "writing autobiography is also like a strip - tease dance. You starts taking of your clothes on the road. There is always a dark corner in the mind of writer which wishes to express itself and to eulogize while wishing at the same time that people don't take her words in the wrong manner. Whatever is written should be taken in the right perspective and meaning. It is up to the readers."तात्पर्य यह है कि आत्मकथा लिखना स्ट्रीपट्रीज डांस की तरह है, जिसमें आपको एक एक कर अपने कपड़े दर्शकों के सामने उतारने पड़ते हैं। लेखक अपनी समस्त व्यक्तिगत कमजोरियों को पाठक के सामने रखते हुए यह निर्णय करने का दायित्व उन्हीं को सौंप देता है। अब यह पाठक पर निर्भर करता है कि वह उस व्यक्ति के बारे में क्या धारणा बनाता है। **कांचा ऐलय्या का कहना है कि आत्मकथा ऐसा लेखन है जिसमें इतिहास का ध्वंस और पुनर्निर्माण किया जा सकता है।"**

अत: इस प्रकार तमाम दूसरी विधाओं की तुलना में उसमें यथार्थ को व्यक्त करने की संभावना ज्यादा होती है तथा इसका विस्तार भी अधिक होता है। स्त्रियों एवं दलितों के लिए यह विधा एक अस्त्र के समान है जिसके माध्यम से वे अपनी पीड़ा को प्रखर रुप में व्यक्त कर पाते हैं।

जब भी अस्मिता विमर्श की बात की जाती है आत्मकथा का ज़िक्र किया जाता है। आत्मकथा के संदर्भ में अस्मिता पर चर्चा आगे बढ़ती है। अत: इस बात की पड़ताल करना जरूरी है कि आत्मकथा विधा से अस्मिता विमर्श का क्या संबंध है।देखा जायें तो आत्मकथा साहित्य की अन्य विधाओं से इस अर्थ में अलग है कि इसमें पूरी प्रमाणिकता से व्यक्ति अपने जीवन की घटनाओं का वर्णन करता है और अपनी विशिष्टता एवं अलग पहचान को भी रेखांकित करता है। यह विधा एक तरह से आत्म का प्रकाशन होती है इसी कारण स्त्री एवं दलित रचनाकार इसी

विधा के माध्यम से अपने अस्मिता संबंधी सरोकारों को व्यक्त करते हैं। इस विधा में वे जातीय एवं लिंगीय अत्याचारों को बेबाकी से प्रस्तुत करते हैं।यह विधा स्त्री एवं दलितों की पीड़ा को पूरे कलेवर के साथ चित्रित करने में पूरी तरह समर्थ है इसी कारण न केवल हिंदी बल्कि अन्य भाषाओं में भी इस विधा का विकास हो रहा है। आत्मकथा ही क्यों? इस संबंध में जगदीश्वर चतुर्वेदी ने अपनी पुस्तक स्त्रीवादी साहित्य विमर्श में लिखा हैं-"वास्तव में इनके जीवन में जो कुछ घटता है, वह उनके सामने हजार सवाल खड़े करता है। ये ऐसे सवाल हैं जिसके उत्तर पुस्तकालयों में नहीं मिल सकता। लेखक को जब अपने सवालों के जवाब नहीं मिलते तब उनके सामने एक ही रास्ता बचता है कि वह कलम उठायें और लिखें।"

आत्मकथा की विशेषता को स्पष्ट करते हुए आलोचक मैनेजर पांडे ने लिखा हैं- "दुनियाभर में और हिंदी में भी आत्मकथा पीड़ितों का एक ऐसा पाठ साबित हो रही है, जिसके माध्यम से पीड़ित वर्ग और समुदाय के व्यक्ति अपने जीवन की कथा कहते हुए अपने वर्ग और समुदाय की जिंदगी की वास्तविकताओं और आकांक्षाओं को अभिव्यक्त करते हैं।"

आत्मकथा विधा में मूल रुप से जिन बिंदुओं पर बात की जाती है वह व्यक्ति के पहचान से जुड़े होते हैं, जैसे -घर, परिवार, समाज आदि।इसमें अस्मिता संबंधी जद्दोजहद मूल रुप से उभरकर आते हैं। इस विधा ने समकालीन अस्मिता के पहलूओं को उभारने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

यह भी प्रश्न उठ सकता है कि जिन स्त्री आत्मकथाओं का चयन किया गया है उसका आधार क्या है।इस शोध में मेरा उद्देश्य अस्मिता विमर्श के संबंध में स्त्री आत्मकथाओं का अवलोकन करना है,शोध की दृष्टि में अस्मिता विमर्श मुख्य है और उसकी सामग्री स्त्री आत्मकथा। यहां जिन आत्मकथाओं को आधार बनाया गया हैं, उसके पीछे कोई महत्वपूर्ण कारण नहीं बल्कि मैंने पांच गैरदलित और दलित आत्मकथाओं को आधार बनाकर अपनी बात रखी है। इस संख्या में कोई भी पाँच स्त्री आत्मकथा हो सकते थे। यहाँ मुख्य उद्देश्य स्त्री के जीवन में उसकी अस्मिता से जुड़े बिंदुओं पर बात करना हैं। इनको चुनने का एक कारण इन

आत्मकथाओं का साहित्यिक जगत में चर्चित और विवादित होना भी है साथ ही इन आत्मकथाओं में स्त्री जीवन के कई महत्वपूर्ण पक्षों पर बातचीत है जो स्त्री अस्मिता के मुद्दों से गंभीरता से जुड़े हुए हैं।

यह सवाल उठ सकता है कि स्त्री तो आखिर स्त्री होती है फिर उसमें विभाजन क्यों? और अगर विभाजन किया भी जाये तो कई तरह के रुप सामने आ सकते हैं। जैसे - सवर्ण-अवर्ण स्त्री, मुस्लिम - हिंदु स्त्री, उच्च-निम्न वर्ग की स्त्री। सिर्फ जाति के आधार पर विभाजन क्यों? वास्तव में हमारे भारतीय समाज में जाति एक महत्वपूर्ण पक्ष है, जो धर्म, नैतिकता और अन्य किसी भी पक्ष से ज्यादा प्रभावी है। जाति के कारण काफी कुछ बदल जाता है, इस समाज में जातिगत बंधन इतने कठोर होते हैं कि इसके चंगुल से बच पाना मुश्किल है। कहने को तो हमें आज़ादी मिल गई पर विचारों में हम आज भी पिछड़े हुए हैं। जाति के आधार पर एक समुदाय दूसरे पर अत्याचार करते हैं। आज के विमर्श के आधार पर हर समूह दूसरे समूह से स्वायत्ता चाहता है अपनी अलग पहचान के आधार पर वह इसे स्पष्ट भी करता है। इसी प्रकार स्त्रियों के एक समुदाय का मानना हैं कि स्त्री जीवन की जिस त्रासदी को दलित स्त्री झेलती है उसे सवर्ण स्त्री नहीं झेलती। यद्यपि एक स्तर पर उसमें समानता होती है पर कई स्तरों में भिन्नता भी। जिस तरह के शोषण और भेदभाव का सामना दलित स्त्री करती है उसकी कल्पना भी गैरदलित स्त्री नहीं कर सकती। यह भी जानना जरुरी है कि स्त्री को किस आधार पर दलित या गैरदलित माने इसका पैमाना क्या हो? क्या केवल जाति ही इसका आधार है या कुछ और। दलित हम किसे कहेंगे? दलित शब्द उन तमाम शोषित जातियों के लिए सामूहिक रुप से प्रयुक्त होता है जो हिंदु धर्मशास्त्रों द्वारा हिंदु समाज में सबसे निचले पायदान पर स्थित है। दलित का अर्थ है -शोषित, खिन्न, उदास, खंडित, विनष्ट। ओमप्रकाशबाल्मिकी ने दलित शब्द के अर्थ को स्पष्ट करते हुए लिखा है -जिसका दलन और दमन हुआ है, दबाया गया है, उत्पीड़ित, उपेक्षित, घृणित। पिछले कुछ दशकों में इसका अर्थ काफी बदल गया है।

इस संबंध में जाति और वर्ग में क्या अंतर हैं इसे भी जानना जरुरी है। वर्ग का आधार आर्थिक होता है, व्यक्ति अपनी योग्यता, शिक्षा, ज्ञान के द्वारा वर्ग में स्थिति को बदल सकता है। वही जाति का आधार सामाजिक और सांस्कृतिक होता है। भारतीय संदर्भ में जाति का महत्वपूर्ण स्थान है, पश्चिम स्तरीकरण का आधार वर्ग है, तो भारत में जाति। भारत के संबंध में कहा जाता है कि यहां हवा में भी जाति घुली हुई है। जातियों में उच्च-नीच का भेद होता है। व्यक्ति के जन्म के साथ ही जाति निश्चित हो जाती है। इसी आधार पर दलित और गैरदलित स्त्रियों में भी कुछ अंतर होते हैं जिसके विषय में शोध में चर्चा की गई है।

स्त्री आत्मकथाओं पर किन बातों को आधार बनाकर विचार किया गया है अर्थात् आत्मकथाओं के अध्ययन का आधार क्या है?इस पर भी बात करना आवश्यक है। मैंने अपने शोध के तहत स्त्री जीवन और अस्मिता से जुड़े कुछ महत्वपूर्ण बिंदुओं को आधार बनाकर बात रखी हैं और इस संबंध में स्त्री विचारकों तथा आत्मकथा लेखिकाओं के निजी विचारों को भी उद्धृत किया हैं। जिन बिंदुओं को आधार बनाया गया है वे निम्नलिखित हैं-

1. विवाह
2. विवाहेत्तर संबंध
3. मातृत्व
4. अंतर्जातीय विवाह
5. पारिवार में बाल यौन शोषण
6. नैतिकता
7. घर और बाहर की जिम्मेदारियों को निभाती स्त्री
8. बलात्कार
9. बाज़ार
10. तकनीक और स्त्री

इन आधुनिक मुद्दों को आधार बनाकर इसके बीच स्त्री की स्थिति को समझने का प्रयास किया गया है। किस प्रकार परिवार तथा समाज में स्त्री को हमेशा वस्तु के रुप में देखा जाता है आज भी उसकी गणना स्वतंत्र मानव के रुप में नहीं की जाती इसे भी उदाहरणों के माध्यम से स्पष्ट किया गया हैं। साथ ही पढ़ी-लिखी आधुनिक स्त्री किस प्रकार इन बंधनों को तोड़ते हुए स्त्री की एक नई छवि गढ़ रही है इसे व्यक्त किया गया है।

शोध को कुल पांच अध्यायों में बाँटा गया है -

शोध के प्रथम अध्याय "अस्मिता विमर्श : पाश्चात्य और भारतीय संदर्भ"में अस्मिता विमर्श के स्वरुप को विभिन्न विद्वानों की परिभाषा के माध्यम से स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है साथ ही भारतीय और पाश्चात्य साहित्य में अस्मिता विमर्श के स्वरुप पर बात की है। इसमें कुछ महत्वपूर्ण आलोचक जैसे नामवर सिंह, अर्चना वर्मा, अमर्त्य सेन के विचारों को भी शामिल किया गया है।विभिन्न विद्वानों ने अलग अलग भाषाओं में अस्मिता की परिभाषा के संबंध में अपने बहुमूल्य विचार व्यक्त किये हैं। उदाहरणस्वरुप -

"अस्मिता शब्द की निर्मिति'अस्मि+तल्+टाप से हुई है जिसका अर्थ होता है अहंकार।"

हिंदी में अस्मिता विमर्श के स्वरुप को स्पष्ट करते हुए आलोचक नामवर सिंह लिखते हैं -"अस्मिता देखने में संस्कृत का शब्द लगता है पर है नहीं, यह अंग्रेजी के आइडेंटिटी का हिंदी अनुवाद है। संस्कृत में इसका अर्थ होता है अहंकार। जिसे अच्छा नहीं समझा जाता। हिंदी में 1950 के आस-पास अज्ञेय ने अस्मिता शब्द चलाया।" संस्कृत साहित्य में अस्मिता की जो अवधारणा थी उससे वर्तमान अस्मिता में भिन्नता है। यह अंग्रेजी के आइडेंटिटी के पर्याय के रुप में हिंदी में ज्यादा प्रचलित है। इनके अनुसार अस्तित्ववाद के साथ आने वाले एक विशेष प्रकार के व्यक्तिवाद के रुप में यह शब्द 1950 के आस-पास हिंदी में प्रचलित हुआ।1970-75 में उत्तर-आधुनिकता के कारण एक नये अर्थ में अस्मिता का प्रयोग

हुआ और उसमें एक नया शब्द जुड़ गया - आइडेंटिटी पॉलिटिक्स। यानिअब अस्मिता की राजनीति हो गई। अस्मिता विमर्श के मुद्दे को उभारने में उत्तर-आधुनिकता की बड़ी भूमिका रही है।

अर्चना वर्मा का मत हैं- अस्मिता एक हद तक संबंद्धता, सरोकार, लगाव और अपनत्व का प्रश्न भी है। जिसे अंग्रेजी में 'सेंस ऑफ बिलोंगिंग' भी कहा जा सकता है।"

आक्सफोर्ड अंग्रेजी शब्दकोश के तीसरे संस्करण के अनुसार -

"The sameness of a person or thing at all times in all circumstances, the conditions or fact that a person or thing it itself and not something else, individuality, personality."

अर्थात् अस्मिता का अर्थ है किसी व्यक्ति की हर परिस्थिति में समरुपता।

शोध के अंतर्गत अस्मिता से संबन्धित विभिन्न विचारधाराओं - जैसे उत्तरआधुनिकता, विखंडनवाद आदि के साथ उसकेसंबंध को स्पष्ट किया गया हैं। समझ की सुविधा के लिए अध्याय को आठ उपअध्यायों में बाँटा गया है।

पाश्चात्य साहित्य में अस्मिता के स्वरुप को स्पष्ट करते हुए वहां के अस्मिता संबंधी महत्वपूर्ण आंदोलन की बात की है जिनमें स्त्रीवाद, अश्वेत आंदोलन, एलजीबीटीक्यू प्रमुख हैं। इसकी संक्षिप्त जानकारी भी दी गई है। कहने का अर्थ है कि जिस तरह हमारे यहां दलित-गैरदलित का भेद है उसी तरह पाश्चात्य साहित्य में नस्ल के आधार पर गोरे और काले का भेद है।

अस्मिता के विभिन्न रूपों- स्त्री, दलित आदिवासी, पर्यावरण विमर्श का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। अस्मिता के सवाल आधुनिक युग की देन है। आधुनिक युग के पहले अस्मिता की धारणा का जन्म नहीं होता। आधुनिक युग के आने के साथ ही व्यक्तिगत को सामाजिक करने तथा अतीत को जानने खोजने

का जो सिलसिला शुरु हुआ उसने ही अस्मिता विमर्श को संभव बनाया। इसे नामवर जी द्वारा दिये गये उदाहरण से समझ सकते हैं -

“जब विकास होता है, तब उसका एक ही मतलब होता है, जैसे कली खिलती है तो उसकी पंखुड़ियां अलग-अलग हो जाती है उसी प्रकार जब बंद समाज खुलता है तो उसके जितने भी अंग होते हैं वे खुलते हैं। उनकी भी अलग पहचान बनती है। अंधेरे में हर चीज एक जैसी दिखाई पड़ती है पर पौ फटते ही सारी चीज अलग-अलग रंग की दिखाई पड़ने लगती है। वैसे ही जब आधुनिकता का प्रकाश हुआ तो समाज के जितने तत्व, विज्ञान की अलग पहचान दिखने लगी। उन्हें भी अहसास होने लगा कि मैं भी कुछ हूँ। यही कारण है कि आज स्त्री विमर्श, दलित विमर्श और आदिवासी विमर्श चर्चा के केन्द्र में हैं।”

अत: नामवर जी के अनुसार इतिहास की प्रक्रिया के दौरान अस्मिताओं का विकास हुआ।इसके साथ ही यह भी बताया गया है कि अस्मिता की अवधारणा भले ही आधुनिक हो पर इस पर पहले भी विचार होता रहा है इसी क्रम में वैदिक काल तथा थेरी गाथा के साथ आदिकाल, भक्तिकाल में भी इसके स्वरुप को स्पष्ट किया गया हैं। थेरियों की अभिव्यक्ति में अस्मिता के स्वर को पहचानने की कोशिश की गई है। अस्मिता को समझने के लिए किन-किन अवधारणाओं को समझना जरुरी है यह भी बताने की कोशिश की गई हैं। अस्मिता के समक्ष वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जो चुनौतियाँ हैं उस ओर भी संकेत किया गया है। इस बात की ओर भी संकेत किया गया है कि नये साहित्यिक और सामाजिक आंदोलनों ने किस प्रकार अस्मिता के रुप को उभारने में मदद की हैं। अस्मिता विमर्श की संभावनाओं को भी रेखांकित किया गया है कि किस प्रकार अस्मिता विमर्श ने साहित्य के स्वरुप का विस्तार किया है।

शोध का दूसरा अध्याय “हिंदी की स्त्री आत्मकथाएं : अस्मिता का संदर्भ” विषय पर तैयार किया गया है। इस अध्याय को चौदह उपअध्यायों में बाँटा गया है।

इस अध्याय में सबसे पहले अस्मिता और आत्मकथा के संबंध को स्पष्ट किया गया है। स्त्री आत्मकथा की विशेषता और पुरुष आत्मकथा से भिन्नता के साथ स्त्री आत्मकथा ही क्यों ज्यादा महत्वपूर्ण है इस पर भी विचार किया गया है। स्त्री और पुरुष आत्मकथा के अंतर को स्पष्ट करते हुए कहा गया है -“A Woman Autobiography generally deals with the various relationships like those with her parents, siblings and with her Spouse, children and other Woman of her family set up. Her identity is established only because of those relationships in her life. A man’s autobiography is mainly concerned with his success story, achievements and the world of work. He rarely focuses on his family relationships.”

इस प्रश्न को भी शामिल किया है कि जिस प्रकार पुरूष आत्मकथा के सन्दर्भ में बनारसीदास जैन की आत्मकथा को प्रथम आत्मकथा माना जाता है उसी प्रकार हिंदी की पहली स्त्री आत्मकथा कौन सी है? यह भी एक विचारणीय प्रश्न है। विभिन्न आलेखों तथा पुस्तकों में इस विषय पर कोई गंभीर चर्चा नहीं मिलती। कुछ वर्ष पहले ही नई दिल्ली में विश्व पुस्तक मेले में डॉ. नामवर सिंह ने अपने विश्वविद्यालय की शोध छात्रा डॉ. नैया द्वारा संपादित तथा राधाकृष्ण द्वारा प्रकाशित “अबलाओं का इंसाफ” का लोकार्पण किया तथा इस तथ्य को भी रेखांकित किया कि यह आधुनिक हिंदी की पहली स्त्री आत्मकथा है।इस पुस्तक का प्रकाशन 1927 में हुआ। नामवर जी ने स्वीकार किया कि **-“इस आत्मकथा का प्रकाशन मेरे लिए आँख खोलने वाला है। उन्होंने हैरानी प्रकट करते हुए कहा कि स्त्रियों द्वारा लिखा गया यह लेखन कैसे महावीर प्रसाद द्विवेदी तथा आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के नजरों से ओझल रह गया।”**

स्त्रियां आत्मकथाएँ क्यों लिखती हैं या इनकी आत्मकथाओं में क्या होता हैं यह भी बताया गया है। स्त्री आत्मकथा समाज और संस्कृति की आलोचना है और उसके साथ मुठभेड़ है और समाज में अपने स्थान बनाने का प्रयास भी। **इनकी आत्मकथा में पहली बार स्त्री को स्त्री की आँखों से देखने का मौका मिलता है।स्त्री**

को अपनी आत्मकथा में किसी समाधान की तलाश नहीं होती बल्कि उसकी आत्मकथा एक खोज है - अपने अस्तित्व और व्यक्तित्व की खोज।

स्त्री आत्मकथा में स्त्री की अस्मिता से जुड़े मुद्दों पर बात की गई हैं विधवा स्त्री और अकेली स्त्री की समस्याओं को भी उकेरा गया है। किस प्रकार धर्म के नाम पर तरह - तरह के आडम्बरों के माध्यम से स्त्री को एक सीमा में बांधा जाता हैं इसे भी स्पष्ट किया गया है। इस अध्याय में पृथक रूप से प्रत्येक स्त्री आत्मकथाओं में अस्मिता के प्रश्न किस रूप में शामिल है इसे व्यक्त किया गया है।

तीसरे अध्याय **"हिंदी की गैरदलित स्त्री आत्मकथाएं : मुख्य मुद्दे"**में सबसे पहले आत्मकथाओं का जाति के आधार पर विभाजन किया गया तथा विभाजन के कारण को स्पष्ट किया गया। इन मुद्दों के माध्यम से गैरदलित स्त्री के जीवन की चुनौतियों तथा सामाजिक सच्चाई को सामने लाया गया है। एक स्त्री किस प्रकार का जीवन जीती है, उसे किन परिस्थितियों से गुजरना पड़ता है और ये सामाजिक तथा पारिवारिक संस्थाएँ किस प्रकार उनकी स्वतंत्रता को सीमित करते हैं तथा धर्म और नैतिकता का सहारा लेकर स्त्री पर किस प्रकार अत्याचार किया जाता है इसे भी स्पष्ट किया गया है।

विवाह संस्था स्त्री के जीवन को कैसे प्रभावित करते हैं इस संबंध मेंमन्नू भंडारी के अनुभव को देखा जा सकता है। विवाह के बारे में मन्नू जी की निजी अवधारणा है कि यद्यपि विवाह में दो लोग जुड़ते हैं पर अधिक जिम्मेदारी स्त्रियों पर होती है। कहने का अर्थ है कि जिस विवाह को करने के लिए एक लड़की परिवार समाज के खिलाफ जाती है पर बदले में उसे क्या मिलता है सिर्फ पीड़ा।शादी के बाद स्त्री की रुचि, पहचान और पसंद भी बदल जाते हैं। उसके बचपन के संस्कार इतने प्रबल होते हैं कि वह अपनी व्यक्तिगत खुशी को भूलकर पति, बच्चों को खुश रखने के लिए अपनी जिंदगी को बदरंग कर देती है। इस प्रकार की भावना को "स्त्री और ओल्गा के साहित्य" में व्यक्त किया गया है। ओल्गा अपनी राजनीतिक कहानी में बताती है कि मधुसूदन नामक युवक एक

लड़की से पचास हजार दहेज लेकर शादी करता है शादी के कुछ समय उसका जीवन खुशी से बीतता है। उस जीवन को खुश बनाने के लिए लड़की ने विशेष प्रयत्न किया। उसका यह कथन है-“उन्होंने मुझे सुख ही दिया, प्रेम दिखाया। पर प्रेम का माप कैसा हो? फूल लाना, पिक्चर दिखाना ही तो है, उनका मेरे प्रति प्रेम में कोई कमी नहीं। पर अगर मैं अपनी पसंद के कानकाम्बर फूलों की माला जूड़ें में लगाती, अगर हिंदी सिनेमा जाने की इच्छा जाहिर करती तो वे चिड़चिड़ाते थे। मैंने शादी के बाद कसम खाई कि उनको चिड़चिड़ाहट कभी आने नहीं दूँगी। इसलिए हम दोनों में प्यार ही था।”

इस अध्याय में यह भी स्पष्ट किया गया है कि यद्यपि बदलते समय के अनुसार स्त्री की भूमिका काफी बदल रही है पर इसके साथ ही घर की जिम्मेदारियों को आज भी स्त्री के संदर्भ में प्राथमिक माना जाता है और उसे बाकी सारी जिम्मेदारियों के साथ घर को भी संभालना पड़ता है। आधुनिक स्त्री के मातृत्व और व्यक्तित्व के द्वंद्व को भी उभारा गया है और उस पर पुनर्विचार करने की बात की गई है। यह भी एक तथ्य है कि स्त्री और पुरुष के लिए समाज में नैतिकता के अलग-अलग मानदंड हैं। समाज में कई मानकों के तहत स्त्री की उड़ान को सीमित किया जाता है ताकि वह पुरुषवादी सीमा के बाहर न जा सके। इस अध्याय मेंसिमोन-द-बउवार, अर्चना वर्मा, जॉनस्टुअर्ट मिल, वर्जीनियावुल्फ तथा अन्य स्त्री आलोचकों की टिप्पणियों को भी शामिल किया गया हैं।

चौथे अध्याय “हिंदी की दलित स्त्री आत्मकथाएं : मुख्य मुद्दे ” में दलित स्त्री आत्मकथा की पृष्ठभूमि को विस्तार से बताते हुए उनकी समाज में स्थिति का उल्लेख किया गया साथ ही जाति के आधार पर उनके साथ किए जा रहे भेदभाव को भी रेखांकित किया गया है। वैवाहिक जीवन की समस्याओं को भी व्यापक रूप में चित्रित किया गया है। आत्मकथा लेखिकाओं के जीवन के माध्यम से उदाहरण देते हुए बात रखी गई है। दलित महिलाओं को न केवल सवर्ण बल्कि स्वयं अपनी जाति के पुरुष के भी अत्याचार का सामना करना पड़ता है इस अर्थ में वे दोहरे

शोषण का शिकार बनती हैं। वह प्रारम्भ से ही घरेलू कार्यों के साथ बाहर का काम भी करती है और उसके साथ शोषण भी अधिक होता है। किस प्रकार पढ़-लिखकर भी इन महिलाओं को जातिगत पीड़ा से मुक्ति नहीं मिलती बल्कि हर दिन अपमान सहना पड़ता है। इसके माध्यम से समाज के जातिगत सोच को भी व्यक्त किया गया है। दलित लेखिकाओं की आत्मकथाएँ व्यक्तिगत होते हुए भी और सामाजिक है और सामाजिक होते हुए भी व्यक्तिगत है। उनकी आत्मकथाओं का स्वर दलित चेतना से पूर्ण होने के साथ-साथस्त्रीवादी चेतना से भी लबरेज है। लेखिका कौशल्या बैसंत्री जब अपनी आत्मकथा 'दोहरा अभिशाप' की भूमिका में अपनी पीड़ा को व्यक्त करते हुए कहती हैं- पति-पुत्र, भाई सब मुझ पर नाराज हो सकते हैं परंतु मुझे भी तो स्वतन्त्रता चाहिए, कि मैं अपनी बात समाज के सामने रख सकूँ। मेरे जैसे अनुभव और भी महिलाओं के आए होंगे परंतु समाज और परिवार के भय से अपने अनुभव समाज के सामने उजागर करने में डरती और जीवन भर घुटन में जीती है। समाज की आंखे खोलने के लिए ऐसे अनुभव सामने आने की जरूरत है।"

पांचवा अध्याय " हिंदी की गैरदलित तथा दलित स्त्री आत्मकथाओं में समानता और अंतर" विषय पर तैयार किया गया है। इसके तहत यह बताने की कोशिश की गई है कि यद्यपि स्त्री पदबंधहोने के कारण दोनों आत्मकथाओं में समानता है पर अंतर भी काफी है।इसे कुछ महिला लेखिकाओं की बातों द्वारा और अधिक स्पष्ट किया गया है।

अर्थात् सामान्य वर्ग की स्त्री को सिर्फ लिंगगत समस्या का सामना करना पड़ता है जबकि दलित स्त्री को लिंग के साथ जातिगत भेदभाव भी झेलनी पड़ती है। वह तिहरे शोषण का शिकार बनती है। लिंगगत, जातिगत और गरीब होने के कारण। दलित स्त्री को न केवल सवर्ण वर्ग बल्कि अपनी जाति के पुरुष के भी शोषण का सामना करना पड़ता है। दलित समाज अशिक्षा के कारण आज भी तरह तरह के अंधविश्वास में डूबा हुआ है और इससे सबसे ज्यादा स्त्रियाँ प्रभावित होती है, इसके उदाहरण बेबीकांबले की आत्मकथा 'जीवन हमारा' को देख सकते हैं जहां वह खोड़ा

प्रथा की चर्चा करती है जबकि सवर्ण समाज के शिक्षित होने के कारण स्त्रियों को इस प्रकार की पीड़ा कम झेलनी पड़ती है। शिक्षा और उच्च पद पर पहुँचने के बाद भी स्त्री की जाति उसका पीछा नहीं छोड़ती। समाज में उसे हीन दृष्टि से देखा जाता है, इस बात को सुशीलाटाकभौरे ने अपनी आत्मकथा शिकंजे का दर्द में अभिव्यक्त किया है।

<u>प्रस्तुत शोध के प्रमुख सवाल -</u> देखा जाए तो हर शोध कुछ सवालों को लेकर शुरु होती हैं और शोधार्थी उसमें अपनी क्षमता के अनुसार कुछ गंभीर प्रश्नों से जूझता है। इन प्रश्नों के उत्तर तलाशते हुए वह शोध की दिशा में आगे बढ़ता जाता है। मैंने भी जब शोध का काम शुरु किया तो मन में कई सवाल पैदा हुए जैसे -

1. स्त्री रचनाकारों के प्रति आलोचकों, इतिहासकारों का रुख नकारात्मक या उपेक्षित क्यों होता है ?
2. हिंदी की पहली स्त्री आत्मकथा कौन-सी है और इस बारे में चर्चा क्यों नहीं होती ?
3. आत्मकथा अन्य विधाओं से अलग कैसे हैं और अस्मिता-विमर्श से उसका क्या संबंध है?
4. स्त्रियाँ आत्मकथाएँ क्यों लिखती हैं या उनकी आत्मकथाओं में क्या होता है?
5. मातृत्व स्त्री की सार्थकता है या नहीं ?
6. विवाहेत्तर संबंध की स्थिति क्यों आती है ?
7. जाति के आधार पर स्त्री आत्मकथा के विभाजन के आधार क्या हो?
8. गैरदलित स्त्री और दलित स्त्री के बीच समानता एवं असमानता के बिंदु ?

कुछ विचारणीय बिंदु एवं निष्कर्ष - इस शोध के अंतर्गत काम करते हुए कई बातें सामने आयी जिस पर विचार करने की काफी जरुरत है, जैसे-

1. विवाह स्त्री के व्यक्तित्व के विकास में सहायक है या बाधक?
2. विवाहेत्तर संबंध की स्थिति क्यों आती है?

3. मातृत्व को ही स्त्री की सार्थकता मानना कहां तक उचित है ?
4. अतंर्जातीय विवाह को समाज क्यों नहीं स्वीकारता ?
5. बाहर काम करके अर्थोपार्जन करने के बाद भी घर को स्त्री की ही जिम्मेदारी क्यों मानी जाती है ?
6. स्त्री को विधवा कहना कहां तक सही है ?

इस शोध की दिशा में आगे बढ़ते हुए निष्कर्ष रुप में कहा जाये तो इसके अंतर्गत:

1. अस्मिता विमर्श की अवधारणा को भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों की परिभाषा के आधार पर स्पष्ट करने के साथ ही साथ विभिन्न विचारधाराओं से उसके संबंध को भी बताया गया है जिससे अस्मिता का स्वरुप कुछ हद तक स्पष्ट हुआ है।
2. अस्मिता के संदर्भ में स्त्री आत्मकथाओं पर विचार किया गया है, स्त्री आत्मकथा की विशेषता, पुरुष आत्मकथा से भिन्नता तथा उसके आत्मकथा लिखने के कारणों की खोज की गई है।
3. यह बताया गया है कि समाज में उत्तरआधुनिकता के बावजूद कहने को तो स्त्री को हमने काफी अधिकार दिये हैं पर इसकी वास्तविकता जगजाहिर है आज भी स्त्री कई बुनियादी मसलों के लिए लड़ रही है और उसे बार बारपुरुषसत्तात्मक सोच के तहत अपमानित होना पड़ रहा है। आज भी पुरुष अपने अंहम् के कारण स्त्री की महत्ता को स्वीकार नहीं करता भले ही ज्ञान में स्त्री पुरुष से ऊपर हो। यह केवल सामान्य स्त्री की नहीं बल्कि पढ़ी लिखी कामकाजी स्त्रियों की भी कमोवेश यही स्थिति है क्योंकि हमारा समाज पितृसत्तात्मक है जहां स्त्री को धर्म, नैतिकता और सामाजिक मान्यताओं, रुढ़ियों के दायरे में सीमित किया जाता है।
4. विवाहेत्तर संबंधों के पनपने की स्थितियों का विस्तार से वर्णन है। जब पति के मन में पत्नी के भावनाओं, उसके सम्मान, उसके स्वप्न की कोई अहमियत नहीं होती तथा वह बार-बार पत्नी को अपमानित करता है और जब स्त्री को अपना आप जिंदा नहीं लगता तब वह ऐसे संबंधों की ओर

बढ़ती हैं जहां उसे प्यार और सम्मान मिलता है और आधुनिक स्त्री ऐसे संबंधों की ओर कदम बढ़ा रही हैं।

5. हम कहने के लिए उत्तरआधुनिक समाज में जी रहे हैं पर आज भी हम जातिगत बंधन से बाहर नहीं आ पाये हैं। कहने का अर्थ है कि आज स्त्री की स्थिति त्रिशंकु की भांति है वह नये बदलाव को स्वीकार करते हुए आधुनिक बनना चाहती है पर परम्परागत सोच उसकी उड़ान को सीमित करते हैं।
6. हमारी सामाजिक मान्यता के अनुसार मातृत्व को काफी महिमा मंडित किया गया है पर **आधुनिक स्त्री केवल माँ बनकर नहीं रहना चाहती बल्कि वह माँ से अलग भी अपनी पहचान चाहती है इसलिए मातृत्व स्त्री का निजी चुनाव होना चाहिए न कि उसकी सार्थकता का मानदंड।**
7. पहले माना जाता था कि स्त्री के लिए आर्थिक स्वतंत्रता जरुरी है और आर्थिक रुप से स्वतंत्र होने पर वह काफी मुक्त होती है पर आर्थिक रुप से स्वतंत्र होने पर भी वह सोच के स्तर पर मुक्त हो जरुरी नहीं। इसे स्त्री लेखिकाओं की आत्मकथाओं के माध्यम से जाना जा सकता है।
8. स्त्रियों की आत्मकथाओं को भी जाति के आधार पर बांटा गया है और बताया गया है कि स्त्रियों में भी वर्गगत समानता नहीं होती और दलित स्त्री को सामान्य स्त्री से अधिक शोषित और अपमानित होना पड़ता है। दोनों के बीच की समानता और असमानता के बिंदुओं को भी रेखांकित किया गया है।
9. शोध में स्त्री से संबंधित समकालीन मुद्दों को भी शामिल किया गया है और उसके प्रति अपनी दृष्टि व्यक्त करने की कोशिश की है। जैसे सुप्रीम कोर्ट ने धारा 497 को निरस्त कर किस प्रकार स्त्री को गुलाम मानने की मानसिकता को चुनौती दी इसे स्पष्ट किया गया है साथ ही छोटी बच्चियों के साथ बलात्कार के मुद्दे पर भी बात की गई है।
10. आधार ग्रंथ के अलावा भी अन्य भाषाओं की कुछ स्त्री आत्मकथाओं को लेकर बात की गई है, जिनमें समस्याएं मिलती-जुलती है। ऐसी

आत्मकथाओं में बांग्ला भाषा की राससुंदरी दासी की आत्मकथा ‘आमारजीबोन”, आसामी की इंदिरा गोस्वामी की आत्मकथा “The unfinished autobiography”

11. शोध के अंतर्गत यह स्पष्ट करने की कोशिश की गई है कि यद्‌यपि स्त्री को लगातार संघर्ष करना पड़ता है पर वह विपरीत परिस्थतियों के बीच अपनी अस्मिता की तलाश करती है और अपनी पीढ़ी को स्वतंत्र व्यक्तित्व बनाने का संदेश देती है।

<u>आधार ग्रंथ</u>

1. क) रसीदी टिकट : अमृता प्रीतम
   ख) अक्षरों के साये में : अमृता प्रीतम
2. अन्या से अनन्या : प्रभा खेतान
3. एक कहानी यह भी : मन्नू भण्डारी
4. क) कस्तूरी कुंडल बसै : मैत्रेयी पुष्पा
   ख) गुड़िया भीतर गुड़िया : मैत्रेयी पुष्पा
5. क) हादसे : रमणिका गुप्ता
   ख)आपहुदरी : रमणिका गुप्ता
6. दोहरा अभिशाप कौशल्या बैसंत्री
7. शिकंजे का दर्द : सुशीला टाकभौरे
8. जीवन हमारा : बेबी कांबले
9. आयदान : उर्मिला पवार

<u>संदर्भ ग्रंथ सूची -</u>

1. दलित साहित्य-अनुभव,संघर्ष एवं यथार्थ - ओमप्रकाश बाल्मिकी
2. स्त्रीवादी साहित्य विमर्श-जगदीश्वर चतुर्वेदी
3. आप्टे वामन शिवराम: संस्कृत हिन्दी शब्दकोश
4. वर्मा अर्चना : अस्मिता विमर्श का स्त्री स्वर
5. संपादक- ठाकुर समीक्षा :बात बात में बात
6. स्त्री परम्परा और आधुनिकता-राजकिशोर
7. मणि माणिक्यांबा :स्त्रीवाद और ओल्गा का साहित्य
8. अन्या से अनन्या-प्रभा खेतान
9. बैसंत्री कौशल्या:दोहरा अभिशाप